समकालीन हिन्दी शोध की स्थिति एवं सम्भावनाएँ

सीमा देवी,
Extension Lecturer,
GC, Chhachhrauli

भूमिका :-

समकालीन हिन्दी शोध की स्थिती एवं सम्भावना जानने से पूर्व हमें शोध क्या है? शोध के पर्याय क्या है? शोध का पूर्व इतिहास क्या है? आदि के बारे में जान लेना चाहिए।

शोध शब्द शुद्ध धातु में (घञ) प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है, शुद्धि, शोधन, स्पष्ट करना, परिमार्जन करना आदि विविध अर्थों को प्रयुक्त किया जाता है। मनुस्मृति में शोध शब्द का प्रयोग सन्देह को दूर करने के लिए हुआ है। स्नानादि से शरीर शुद्ध होता है, नदी वेगवती रहकर शुद्ध होती है और सत्य से मन शुद्ध होता है, यह मन का संस्कारात्मक शोधन है।

शोध के अनेक पर्याय प्रचलित हैं। इनमें कुछ तो संकुचित अर्थ रखते हैं। जबकि कुछ पर्याय शोध शब्द को पर्याप्त विस्तार प्रदान करते हैं। ये पयाय इस प्रकार हैं - खोज, शोध, अन्वेषणा, गवेषणा, अनुशीलन, परिशीलन, अनुसंधान, रिसर्च, डाक्टरेट, थीसिस, पी. एच. डी. आदि शोध के प्रचलित पर्याय है।

शोध के विषय में डा० विनयमोहन शर्मा का कहना है कि 'शोध एक सतत् प्रवाहमान प्रक्रिया है, जिसका आदि तो है, अन्त नहीं'

कहने का भाव यह है कि सृष्टि की सम्पूर्ण ज्ञान (वस्तु) शोध का विषय है। शोध का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। अब हमें हिन्दी शोध के इतिहास का जान लेना चाहिए। क्योंकि शोध के इतिहास को जाने बिना हम उसकी समकालीन स्थिति और सम्भावना को नहीं जान पायेंगें।

हिन्दी शोध का इतिहासः-

उपलब्ध हिन्दी के शोध ग्रन्थों से यह पता चलता है कि सबसे पहले हिन्दी भाषा तथा साहित्य पर शोध कार्य विदेशी विश्वविद्यालयों में हुआ और इसके शोधकर्ता भी अहिन्दी भाषी थे आरम्भिक शोध ग्रन्थ विस्तार की दृष्टि से, विश्लेषण-स्थूलता तथा शोध व्यवस्था की अनिश्चितता के कारण परवर्ती शोध कार्यों के स्वरूप प्रगतिशील

तथा आदर्श शोध मार्ग प्रशस्त करने में असमर्थ रहे, लेकिन शोध परम्परा-प्रजनन की दृष्टि से इनका विशेष महत्व है, शोध तकनीक की दृष्टि से नहीं।

सर्वप्रथम शोध कार्य करने वाले विद्ववानः-

फ्लोरेंस विश्व - विद्यालय के स्नातक श्रीयुत पिओ तेसीतेरी (एल. पी. टेसीटरी) ने सन- 1911 ई० में इटैलियन भाषा में, 'इल रामचरितमानस ए इल रामायण' विषय पर एक लेख लिखा, प्राच्य विद्ववानों ने इस लेख की भूरि-भूरि प्रशंसा की, इसी प्रशंसा से प्रेरित होकर विश्वविद्यालय ने तेसीतेरी को शोध की उपाधि से सम्मानित किया।

हिन्दी क्षेत्र में शोध विषय का दूसरा शोध कार्य लन्दन में सन् 1918 में श्री जे. एन. कारपेन्टर ने दथियो-लॉजी ऑफ तुलसीदास (तुलसीदास का धर्मदर्शन) का विषय प्रस्तुत किया है। इससे पूर्व डॉक्टर ऑफ फिलांसफी को डॉक्टर ऑफ डिवनिटी के नाम से जाना जाता था।

सन् 1931 में श्री बाबूराम सक्सेना ने (अवधी का विकास) इवोल्यूशन ऑफ अवधी विषय पर प्रयाग विश्वविद्यालय में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया, इस शोध विषय पर उनको डी. लिट् की उपाधि प्राप्त हुई, यह पहला हिन्दी का शोध प्रबन्ध था, जो किसी हिन्दी विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया गया।

1934 ई० में श्री पीताम्बरदत्त बडथ्वाल ने हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में 'दा निर्गुन स्कूल ऑफ हिन्दी पोइट्री (हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय)' शोध प्रबन्ध पर डी. लिट् की उपाधि प्राप्त की थी, यह हिन्दी विषय पर हिन्दी भाग में प्रस्तुत किया गया पहला शोध प्रबन्ध माना जाता है।

सन् 1937 से 1947 तक का समय हिन्दी शोध का विकास काल माना जाता है।

शोध कार्य को स्वतंत्रता की दृष्टि से दो भागों में बांटाः-

(क) स्वाधीनता-पूर्व शोध कार्य (ख) स्वाधीनता के बाद शोध कार्य

प्रथम प्रकार के शोध कार्य गुणात्मक दृष्टि से उत्तम होते हुए भी परिणामत्मक दृष्टि से सीमित रहे हैं, इन कार्यों की प्रकृति, प्रकार्यता तथा रचना विधान आदि को देखने से पता चलता है कि विषय-विस्तार, शोध मूल्यों की अस्पष्टता, शोध नियमों की अनिश्चियता तथा शाध प्रविधि कर अनभिज्ञता इनका दूषण रही है।

स्वाधीनता के बाद शोधकार्य (वर्तमान) हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य के बाह्य स्वरूप तक ही सीमित है। इनके पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है।

हिन्दी क्षेत्र में शोध संभावनाऐं

ज्ञान साधना के पवित्र मंदिर में मनसा, वाचा, कर्मणा, सेवापरायण, शोधार्थी, शोध निरीक्षण तथा शोध परीक्षिकों को ही प्रवेश करना चाहिए, सस्ती लोकप्रियता चाहने वाले तथा अर्थाभिलाषी शोधार्थियों को इस क्षेत्र को अपवित्र नहीं करना चाहिए। आज तक हिन्दी शोध प्रबन्धों की संख्या लगभग अत्यधिक हो चुकी है, शोधार्थियों ने हिन्दी साहित्य के लगभग सभी पहलुओं पर परिश्रम किया, नई खोजें की, नए तथ्यों की स्थापना की तथा नए ढंग से पुरानी चीजों का विश्लेषण करते हुए पुनर्मूल्यांकन तथा अनुशीलन किए गए हैं। सम्भावनाओं के अन्तर्गत हम उन्हीं क्षेत्रों की चर्चा कर रहे हैं

1. तुलनात्मक शोध

तुलनात्मक शोध हिन्दी में बहुत कम हुए हैं, हिन्दी के कवियों एवं रचनाओं की तुलना हिन्दी के ही अन्य कवियों और रचनाओं में करने के काफी शोध हो चुके हैं, परन्तु हिन्दी साहित्य की रचनाओं, साहित्यकारों, प्रवृतियों एवं विधाओं से करना आपेक्षित है। यह पक्ष अत्यधिक समृद्ध है। किन्तु शोधार्थियों ने इस ओर कम ध्यान दिया है। वे दो साहित्यों के तुलनात्मक अध्धयन से जी चुराते हैं। यही कारण है कि उक्त क्षेत्र अछूता तो नहीं किन्तु इसमें कार्य अपर्याप्त है।

2. अनुवाद

आज कोई भी साहित्य सोमित घेरे में बंधकर नहीं रह सकता। सम्पर्क साधनों के विकसित होने के कारण समग्र विश्व की भाषाओं के साहित्य एक दूसरे को प्रभावित करने लगे हैं। यही कारण है कि संसार की उन्नत भाषा के साहित्य की श्रेष्ठ रचनाऐं आज हिन्दी में अनुवाद होने लगी हैं। यह अनुदित साहित्य आज प्रर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता, विभिन्न भाषाओं से जैसे द्रविड भाषा, मराठी, गुजराती, उर्दु, पंजाबी में शोध कार्य होने लगे हैं। आज अुनदित साहित्य भी शोध का आधार बन सकता है, इसकी सम्भावनाऐं खूब उज्जवल हैं।

3. काव्यशास्त्रः-

काव्यशास्त्रीय क्षेत्र तो जैसे शोधार्थी के लिए हौआ बन गया है वर्तमान स्थिति में इस दिशा में शोध कार्य बहुत कम हो रहा है। किसी भी कवि की रचना, कोई भी साहित्यक विधा काव्यशास्त्रीय कसौटियों पर आज भी परखी जा सकती है। किन्तु आज का शोधार्थी उस दिशा में झांकने से भी घबराता है, कि कहीं वह किसी लक्षणा, व्यंजना या अलंकार छंद में उलझ ना जाए, यह सही है कि काव्यशास्त्र पक्ष का अध्धयन श्रम, साध्य और सिद्धान्तनिष्ठ होता है। लैटिन, यूनानी, अंग्रेजी एवं संस्कृत की मूल भाषाऐं निश्चय ही सीखने में भारी पडती हैं इसकी पृष्ठभूमि पर एक दीर्घ साधना अपेक्षित है, किन्तु इसका महत्व है। यह क्षेत्र भी खूब उपजाऊ है। शोधार्थी इसमें अपना लक्ष्य खोज सकता है।

4. देवनागरी से इत्तर अन्य लिपियों में प्राप्त हिन्दी साहित्यः-

रहस्य नहीं है कि मध्य काल में फारसी, गुजराती, उडिया, असमिया आदि लिपियों में विपुल हिन्दी साहित्य लिखा गया था, और अब वह दीमक का भोजन बनने के लिए पुराने तहखाने और रजवाडो पुस्तकालयों के सीलन भरे एकांत कोनों में सिर घुन रहा है। हिन्दी विद्ववानों की गति उन लिपियों में नहीं है इसलिए यह महानीय साहित्य इति में ना था, आज उसी प्रदेश में उदित हिन्दी विद्ववानों की उक्त साहित्य में शोध कर सकने की असंभव सम्भावनाऐं लिए हुए है, केवल पंजाबी की गुरमुखी लिपि में उपलब्ध हिन्दी साहित्य में से असंख्य विषयों का चुनाव संभव है। तात्पर्य यह है कि हिन्दीतर लिपियों में उपलब्ध साहित्य शोधार्थ सम्पन्न क्षेत्र है। शोधार्थियों को इस ओर ध्यान देना चाहिए, और उपलब्ध सम्भावनाओं से लाभान्वित होना चाहिए।

5. प्राचीन एवं मध्यकालीन उपेक्षित साहित्यः-

पिछले 50 वर्षों से अधिकतर शोधार्थी आधुनिक साहित्य के अन्वेषी बनने लग हैं। प्राचीन तथा मध्यकाल के साहित्य की निरन्तर उपेक्षा होने लगी है। उक्त उपेक्षित साहित्य में शोध की संभावना आज भी मौजूद है। नाथ, सिद्ध और जैन साहित्य तो लगभग अछूते पडे हैं। आदिकाल तथा रीतिकाल पर उपलब्ध शोधप्रबन्धों को उंगलियों पर गिना जा सकता है। आदिकाल में चारण काव्य से इत्तर साहित्य को जानना आवश्यक है।

परवर्ती साहित्य पर विद्यापति के प्रभाव की जाँच करना अभी शेष है। शोध संभावनाओं की खोज में अनुसंधित्सुओं को आधुनिक काल से आगे देखना होगा, शोध विषय विपुल मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगें।

निष्कष:–

उपर्युक्त पहलुओं से स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य सम्बन्धी शोध की विपुल संभावनाऐं हैं। इनके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें शोध कार्य संभव हैं। लोक साहित्य की अलग–अलग विधाओं पर आधारित कहावतों, पहेलियों, महावरों, भाषा वज्ञानिक, कठिनाईयों और उपलब्धियों सम्बन्धी आदि। इन क्षेत्रों में कार्य करने के लिए शोधार्थी को अपने भीतर कुछ गुण अर्जित करने होते हैं। वर्तमान हिन्दी शोध कार्य को व्यवसायिक प्रवर्ती से बचाने की आवश्यकता है। पदप्राप्ति, धनप्राप्ति की भावना से किए जाने वाले शोध कार्यों पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। शोध कार्य पवित्र ज्ञान प्रप्ति तथा ज्ञान विस्तार की भावना से किया जाना चाहिए।